International Journal of Sanskrit Research 2017; 3(1): 88-89

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2017; 3(1): 88-89
© 2017 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 21-11-2016
Accepted: 22-11-2016

डॉ सुनीता सैनी
असिस्टेण्ट प्रोफेसर, संस्कृत, पालि एवं प्राकृत विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा, भारत।

Correspondence
डॉ सुनीता सैनी
असिस्टेण्ट प्रोफेसर, संस्कृत, पालि एवं प्राकृत विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा, भारत।

लोलिम्बराज कृत 'हरिविलास काव्यम् पांडुलिपि की समीक्षा

डॉ सुनीता सैनी

प्रस्तावना

लोलिम्बराज विरचित हरिविलास पांच सर्गों का काव्य है। इस काव्य की एक पांडुलिपि कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के पुस्तकागार में संरक्षित है। इस पांडुलिपि के लिपिकार 'शिवशंकर' हैं जिन्होंने ग्रन्थ का आरम्भ ऊँ स्वस्ति श्री गणेशाय नमः श्री कृष्णाय नमः से करते हुए ग्रन्थ के लेखन के अन्त में 'समाप्तमिदं काव्यं शुभमस्तु सर्वजगतां श्रीरस्तु। हरयेते नमः। खमष्टवसुचद्रेंब्देचैत्रासितगिरौरवौजन्बां हरिविलासाख्यमलिखत्शिवशंकरः। काव्यमिति शेषः विक्रमादित्य सन् 1880 वर्णित है। उपर्युक्त उल्लेख से इस पांडुलिपि का प्रणयन सन् 1823 में किया गया होगा। हरिविलास की इस पांडुलिपि को 14 पृष्टों पर लिखा गया है जिसके हर पृष्ठ के अन्त में 'श्रीः' अंकित किया गया है। पांडुलिपि के लेख में अनेक स्थानों पर दोष आ गया है। कुछ स्थानों पर अक्षर मिटे हुए हैं और लेख भी आरम्भ के पृष्ठों पर बड़ा और अन्त के पृष्टों पर छोटा हो गया है। प्रत्येक पृष्ठ पर पंक्तियों की संख्या में भी अन्तर है। लेख में 'ब' के स्थान पर 'व' का प्रयोग मिलता है। यथा प्रथम सर्ग के नवे श्लोक में–

मुहुरिति विलपंती कुत्र पुत्र प्रयातो द्रुतगति वहिरन्तष्पर्यतंती समंतात्।
मरकतमणि मह्यं नाविदन्नन्दपत्नी स्फुटमपि घनकृष्णं वाल कृष्णं कदाचित्।।

लिपिकार ने तीन स्थानों पर रचनाकार लोलिबंराज का उल्लेख किया है। प्रथम सर्ग समाप्ति पर 'इतिश्री मत्पंडितकुलालंकार श्री हरिहर महाराजाधिराजोद्योतित लोलेविराज विरचिते हरिविलासेमहाकाव्येकृष्णवाल क्रीडा वर्णनं नाम प्रथम सर्गः। तथा अन्तिम सर्ग की समाप्ति पर 'इतिश्रीमत्सूर्यपंडितकुलालंकार श्री हरिहर महाराजोद्योतितलोलिंबराज विरचिते हरिविलासे महाकाव्ये कसंवधो नाम पञ्चमः सर्गः' उल्लेख है। दोनों उल्लेखों में कवि के नाम में किंचित अन्तर मिलता है। वस्तुतः कवि का नाम लोलिम्बराज है। सूर्यपंडित के पुत्र हरिहर महाराज से प्रेरित होकर उन्होंने इस हरिविलास नाम महाकाव्य की रचना की। यद्यपि कवि ने इसे महाकाव्य कहा है परन्तु पांच सर्गों का होने के कारण इसे लघु काव्य ही माना जा सकता है। इस पांडुलिपि के पाँचसर्गों में क्रमशः 31, 42, 38, 37 व 37 श्लोक है। श्लोकों की कुल संख्या 185 है।

'An Encyclopedia of Indian Literature' में हरिविलास काव्य का संक्षिप्त परिचय मिलता है। पाँच सर्गों के इस सुन्दर काव्य को लोलिम्बराज कृत बताया गया है जिससे कृष्ण द्वारा कंस वध तक की कथा वर्णित है।[1]

एम॰ कृष्णमाचारी की पुस्तक 'History of Classical Sanskrit Literature' में लोलिंबराज को विजय नगर के शासक हरिहर का दरबारी बताया गया है। ये सूर्यपण्डित के वंशज दिवाकर के पुत्र थे। हरिविलास के रचयिता होने के साथ–साथ ये एक चिकित्सक भी थे जिनकी 'वैद्यजीवन' नामक रचना प्रसिद्ध है। इन्होंने 'सुन्दर दामोदर' की रचना भी की थी। इसी स्थल पर हरिविलास 'काव्य के निर्णयसागर यंत्रालय मुम्बई से प्रकाशित होने की सूचना दी गई है।[2]

एम॰ कृष्णमाचारी ने इन्हें 15वीं शताब्दी का कवि बताया है।[3] राजवंश सहाय 'हीरा' इन्हें वैद्यराज व हरिविलास का रचयिता बताते हुए 11वीं शताब्दी का कवि कहते है।[4] राजेन्द्रलाल मित्रा ने लोलिम्बराज कृत हरिविलास की पांडुलिपि का प्राप्ति स्थान काशीवासी श्रीयुत्वावुहरिश्चन्द्र को बताया है जिसके पत्रों की संख्या 18 तथा प्रत्येक पत्र पर 10 पक्तियाँ अंकित है।[5] इस दृष्टि से इस पांडुलिपि में लगभग 180 श्लोक रहे होंगे जो कि कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के पुस्तकागार की पांडुलिपि के श्लोकों की संख्या के समान ही है।

ए॰ वी॰ कीथ ने लोलिंबराज कृत वैद्यजीवन को 17वीं शताब्दी की रचना माना है जबकि अन्यत्र वे हरिविलास को 1050 ई॰ की रचना मानते है इस प्रकार कीथ दो लोलिंबराज का अस्तित्व बतलाते है जिनमें से एक केवल कवि तथा दूसरा चिकित्सक भी था।[6]

मध्ययुगीन चरित्रकोश में लोलिंबराज का काल 1633 ई॰ माना है। इस कोश के अनुसार लोलिबंराज जुनार पूने के निवासी दिवाकर भट्ट जोशी के पुत्र थे। इन्होंने रत्नकला नामक मुस्लिम युवति से विवाह किया था। इन्होंने वैद्यजीवन व हरिविलास के अतिरिक्त कुछ अन्य ग्रंथों की भी रचना की। उनका वास्तविक नाम न्यम्बकराज था।[7]

आफ्रेक्ट ने कैटालोगस कैटेलोगोरम में बताया है कि पुरुषोत्तमदेव ने अपने ग्रन्थ 'वर्णदेशना' में लोलिंबराज कृत' हरिविलास काव्य' को उद्धृत किया है और पुरुषोत्तमदेव का काल 12वीं शती है।[8]

कल्पद्रुमकोश की भूमिका में 1159 ई॰ के सर्वानन्द ने अपने ग्रन्थ 'अमरकोषटीका' में पुरुषोत्तमदेव को उद्धृत किया है। इस प्रकार यह कृति 11वीं शताब्दी की रचना है।

इस हरिविलास काव्य की कई पाण्डुलिपियाँ मिलती है। तंजौर एम॰ एस॰ एस॰ लाइब्रेरी में इस काव्य की पाँच पाण्डुलिपियाँ संरक्षित है।[9] पाण्डुलिपि संख्या 3857 व 3859 में काव्यमाला संस्करण में प्रकाशित 96वाँ श्लोक नहीं मिलता है। इस श्लोक में कवि ने स्वयं को रत्नकला रमण' कहा है। पाण्डुलिपि संख्या 3858 में लोलिम्बराज के आश्रय दाता हरिहर की वंशावली वाला श्लोक मिलता है। पाण्डुलिपि संख्या 8860 व 8861 अपूर्ण है। भण्डारकर ऑरियन्टल रिसर्च इस्टीट्यूट की पाण्डुलिपि लाइब्रेरी में हरिविलास काव्य की छः पाण्डुलिपियाँ संरक्षित है– 1 पाण्डुलिपि संख्या 78, 467, 468, 487 व 204 व 377।

पाण्डुलिपि संख्या 78 का अन्तिम श्लोक 'नाना गुणैरवनि मण्डलमण्डनस्य – लोलिंबराज कविना कवि नायकेन'। जो काव्यमाला संस्करण व कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय की पाण्डुलिपि में लगभग एक समान है परन्तु तीनों की 5वें सर्ग की श्लोक संख्या में बहुत अन्तर है। कुरुक्षेत्र की पाण्डुलिपि में केवल 37, काव्यमाला में 98 तथा BORI की पाण्डुलिपि संख्या 78 में 54 श्लोक है। पाण्डुलिपि संख्या 468 वही है जिसका उल्लेख राजेन्द्रलाल मित्रा ने अपनी पुस्तक 'Notices of Sanskrit MSS' के क्रम संख्या 83 पर किया है। पाण्डुलिपि संख्या 487 में 96वॉ श्लोक नहीं मिलता परन्तु वह वर्णन आरम्भ में दिया गया है। परन्तु पाण्डुलिपि संख्या 204 में ये श्लोक आरम्भ व अन्त कहीं नहीं मिलते। जबकि पाण्डुलिपि संख्या 377 में 'कि 'व्यक्त्वा वसतिर्बलेक्षितित।..... क्षमापाल चूडामणि। नाना गुणै..... आदि श्लोक है वैसा ही वर्णन कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय की पाण्डुलिपि में भी है परन्तु पंचम सर्ग की श्लोक संख्या में दोनों पाण्डुलिपि में अंतर है। पा॰ स॰ 377 के पंचम सर्ग में 59 श्लोक है।

प्रकाशित काव्यमाला संस्करण में पाँच सर्गों में श्लोकों में संख्या क्रमशः 34, 35, 70, 77, 98 है। अर्थात् श्लोकों की कुल संख्या 314 है।[10] जबकि कुरुक्षेत्र वि॰ वि॰ की पाण्डुलिपि में 129 श्लोक कम है अर्थात् केवल 185 श्लोक हैं। लिपिकार शिवशंकर का समय अपेक्षाकृत अर्वाचीन भी है क्योंकि BORI में प्राप्त पाण्डुलिपियों का समय 1583 ई॰, 1622वीं व 1624 ई॰ आदि है।

हरिविलास काव्य पर लिखी गई तीन टीकाओं का भी वर्णन उपलब्ध होता है। BORI की पाण्डुलिपि संख्या 182 रघुनाथ विरचित सुबोधिनी नामक टीका है। यह हरिविलास के प्रथम सर्ग पर ही लिखी गई है। BORI की पाण्डुलिपि संख्या 425 भट्ट कमलाकर विरचित 'साहित्य सच्चन्द्रिका' नामक टीका है। इस टीका का उल्लेख एम॰ कृष्णमाचारी ने भी अपनी पुस्तक के क्रमांक 236 पर किया है। वहाँ कमलाकर को चतुर्भुज नामक कवि का पुत्र बताया गया है। इन्होंने 'घटकर्पर' पर भी टीका लिखी है। आफ्रेक्ट ने कैटेलोगस कैटैलोगोरम Vol. II 183 पर कमलाकर कृत टीका का उल्लेख किया है।

केरावकूट के पुत्र यादवकूट विरचित भावार्थदीपिका भी हरिविलास की टीका है। आफ्रेक्ट ने इसका उल्लेख BL115(i) व 116(2) में किया है।

हरिविलास काव्य का प्रकाशन निर्णय सागर प्रेस मुम्बई द्वारा 1895 में ही हो चुका है। काव्यमाला के एकादशो गुच्छक में सात काव्यों का प्रकाशन एक साथ किया गया। इस पुस्तक के 94 से 133 पृष्ठों पर हरिविलास काव्य है। इस काव्य के प्रथम श्लोक की पाद टिप्पणी में हरिहर महाराज को भोज राज का समकालीन बताया गया है। इसी पुस्तक में पाठ भेदों को भी पाद टिप्पणी के अन्तर्गत दर्शाया गया है। इसके अतिरिक्त ईस्टर्न बुक लिंकर्स नई दिल्ली द्वारा 1982 में राजकुमारी कुब्बा विरचित ग्रन्थ 'Krishna Kavya in Sanskrit Literature with special reference of Sri Krishna Vijaya, Rukmini Kalyana and Harivilasa' का प्रकाशन किया गया जिसमें हरिविलास काव्य का साहित्यिक अध्ययन किया गया है।

संदर्भ सूची

1. An Encyclopedia of Indian Literature by Ganga Ram Garg, 141.
2. History of Classical Sanskrit Literature by M. Krishnamacaare, 129.
3. वही, 210.
4. संस्कृत साहित्य कोश – राजवंश सहाय हीरा, पृ. 678
5. Notices of Sanskrit MSS - Rajendra Lal Mitra, 83ण
6. मध्ययुगीन चरित्रकोश – एस॰ चित्रव शास्त्री पूना, पृ. 721
7. Aufrecht's Catalogues Catalogorum. 1:761
8. Catalogues of Manuscripts in the Palace Library Tanjore by P.P.S. Shastri Vide. 1929, 2854, VI.
9. काव्यमाला – शिवदत्तशर्मा व काशी नाथ शर्मा द्वारा संशोधित (वर्ष 1895)